हम बौद्ध क्यों बने?
बाबासाहेब डॉ. बी.आर. आंबेडकर
सम्यक प्रकाशन

मुक्ति कोळ पथे?

अर्थात

हम बौद्ध क्यों बनें?

(हिन्दू धर्म त्यागने का संकल्प)

बाबा साहेब डॉ. बी.आर. आंबेडकर

अनुवादक

डॉ. विमलकीर्ति

प्रथम संस्करण : 2008 (बुद्धाब्द 2552)
द्वितीय संस्करण : 2010 (बुद्धाब्द 2555)
तृतीय संस्करण : 2015 (बुद्धाब्द 2559)
चतुर्थ संस्करण : 2019 (बुद्धाब्द 2564)
पांचवां संस्करण : 2022 (बुद्धाब्द 2567)

ISBN : 978-81-941154-3-4

प्रकाशक : **सम्यक प्रकाशन**
32/3, पश्चिम पुरी, नई दिल्ली—110063
दूरभाष : 9810249452, 9818390161
Email: hellosamyak1965@gmail.com
Web : www.samyakprakashan.in

मूल्य : 20 रुपये

रचना : **हम बौद्ध क्यों बने?**
रचनाकार : बाबासाहेब डॉ. बी.आर. आंबेडकर
अनुवाद : डॉ. विमलकीर्ति
चित्रांकन : शान्त कला निकेतन
शब्दांकन : संदीप आर्ट एण्ड ग्राफिक्स

मुद्रक : बालाजी ऑफसेट प्रिन्टर्स, नई दिल्ली

Hum Bauddh Kyaun Bane? (Hindi) by Dr. B.R. Ambedkar

हम बौद्ध क्यों बनें?

हिन्दू धर्म त्यागने का संकल्प

डॉ. बी.आर. आंबेडकर द्वारा 13 अक्टूबर 1935 को येवला की विशाल जनसभा में 'मुक्ति कोळ पथे' नामक ऐतिहासिक भाषण दिया था। प्रस्तुत है उसी का हिन्दी रूपान्तर

(13 अक्टूबर 1935 को मुंबई के पुरंदरे स्टेडियम में महार (दलित) सम्मेलन में डॉ. बी.आर. आंबेडकर ने इस भाषण के द्वारा धर्म-परिवर्तन का संकल्प किया था। यद्यपि इसके लगभग 20 वर्षों बाद ही उन्होंने हिंदू धर्म का त्याग करके बौद्ध धर्म अपनाया था। यह दस्तावेज उस भाषण का संक्षिप्त अंश है। मूल भाषण मराठी पाठ का हिंदी अनुवाद डॉ. विमलकीर्ति विभागाध्यक्ष पालि-प्राकृत विभाग, नागपुर विश्वविद्यालय, नागपुर द्वारा किया गया है।)

"मैंने धर्मांतरण की जो घोषणा की है, मुख्यतः उसी पर चिंतन और सलाह करने के लिए मैंने यह सम्मेलन बुलाया है। धर्मांतरण का प्रश्न मेरी दृष्टि से बहुत ही महत्वपूर्ण है। हम दलित, शोषित, पीड़ित जनता का आगामी भविष्य भी मेरी दृष्टि से इस धर्मांतरण की समस्या पर ही अवलंबित होने के कारण, यह प्रश्न मुझे बहुत अधिक महत्वपूर्ण लगता है।

धर्मांतरण न तो बच्चों का खेल है और न ही यह मौज-मस्ती का विषय है। यह तो तमाम दलित समाज की जीवन-मृत्यु का प्रश्न है। नाविक को अपना जहाज नए बंदरगाह पर ले जाने के लिए जितनी मात्रा में पूर्व तैयारी करनी पड़ती है, उतनी ही पूर्व तैयारी हमें धर्मांतरण के लिए भी करनी पड़ेगी। इसके बिना इस हिंदू धर्म का त्याग करके एक नया, किंतु मानवता से परिपूर्ण जीवन प्राप्त करना कदापि संभव नहीं है।

धर्मांतरण के प्रश्न पर दो दृष्टियों से विचार किया जाना चाहिए। सामाजिक दृष्टि से विचार करना चाहिए और धार्मिक दृष्टि से भी विचार करना चाहिए।

इसी प्रकार तात्त्विक दृष्टि से भी विचार करना चाहिए। किंतु किसी भी दृष्टि से धर्मांतरण पर विचार कीजिए, सबसे पहले अस्पृश्यता (अछूतपन) क्या बला है? इसका वास्तविक स्वरूप क्या है? इसका वास्तविक ज्ञान कर लेना बहुत ही आवश्यक है। इसके बिना मेरे धर्मांतरण की घोषणा का अर्थ समझ पाना आप सब लोगों के लिए संभव नहीं है। अछूतपन क्या बला है और इसका असली स्वरूप क्या है? इसकी जानकारी आप लोगों को होनी चाहिए, इसीलिए मैं तमाम दलित-अछूत वर्ग पर स्पृश्य हिंदुओं द्वारा हो रहे जुल्म और अत्याचारों की आप लोगों को याद दिला देना आवश्यक समझता हूं।

सरकारी पाठशालाओं में अपने बच्चों को पढ़ाई के लिए प्रवेश दिलाने का हक जताने के कारण, सार्वजनिक और सरकारी कुओं पर, तालाब और पनघट पर पानी भरने का हक जताने के कारण, घोड़े पर बारात ले जाने का हक जताने के कारण, जुलूस और मोर्चे निकालने का, सभा और सम्मेलन आयोजित करने का हक जताने के कारण स्पृश्य हिंदुओं द्वारा अछूत-दलित वर्ग के साथ मारपीट करने की घटनाएं सुबह से शाम तक हमेशा ही होती रहती हैं। अतः यह दृश्य सबकी आंखों के सामने है। किंतु मारपीट करने के कई दूसरे कारण भी हैं, जिनका उल्लेख करने पर भारत के बाहर के लोगों को भी दुख होगा। अछूतों द्वारा कीमती और अच्छे कपड़े पहनने के कारण स्पृश्य हिंदुओं द्वारा उनके साथ मारपीट किए जाने के असंख्य उदाहरण दिए जा सकते हैं। अछूतों द्वारा पानी भरने के लिए तांबे और पीतल के बरतन इस्तेमाल करने के कारण स्पृश्य हिंदुओं द्वारा उनके साथ मारपीट किए जाने की असंख्य घटनाएं दर्ज की जा सकती हैं। अछूतों द्वारा भूमि खरीदी जाने के कारण स्पृश्य हिंदुओं द्वारा उनके घर-मकान जलाए जाने की असंख्य घटनाएं बताई जा सकती हैं। अछूतों के जनेऊ धारण करने के कारण स्पृश्य हिंदुओं द्वारा उनके साथ मार-पीट करने की असंख्य घटनाएं हैं। मरे हुए पशुओं को नहीं उठाने के कारण और मरे हुए जानवर का मांस खाने से इनकार करने के कारण स्पृश्य भी हिंदुओं द्वारा उन्हें मारने-पीटने के अनगिनत उदाहरण दिए जा सकते हैं। अछूतों के अपने पांव में जूता और जुराब पहनकर गांव में से गुजरने के कारण, रास्ते में मिले स्पृश्य हिंदुओं को जोहार (झुक कर

सलाम बजाना) नहीं करने के कारण उन पर हिंदू स्पृश्यों द्वारा अमानवीय जुल्मो-सितम ढाए जाने की दर्दभरी असंख्य घटनाएं हैं। अछूतों के अपने समाज के पंचों की पंक्ति में चपाती परोसने के कारण स्पृश्य हिंदुओं द्वारा उनकी पंगत को ही मटियामेट करने की घटना ताजा है।

उपर्युक्त प्रकार के जुल्मो-सितम स्पृश्य हिंदुओं द्वारा अस्पृश्य समाज पर सदियों से होते आ रहे हैं और आज भी इस प्रकार के अत्याचार होने की अनगिनत घटनाएं होती रहती हैं। इस अमानवीय ढंग से व्यवहार करने की कई घटनाएं आपके सुनने में ही नहीं, देखने और स्वयं भुगतने में भी आई होंगी। जहां स्पृश्य हिंदुओं द्वारा अछूतों को मारना-पीटना संभव नहीं था, वहां उन्होंने आपके विरुद्ध बहिष्कार के हथियार का कैसे इस्तेमाल किया? इसका भी आप लोगों को अच्छा-खासा ज्ञान होगा ही। अछूतों को मजदूरी नहीं मिल पाए, इसकी पूरी कोशिश स्पृश्य हिंदू करते हैं। जंगल में से आपके पशुओं को नहीं गुजरने दिया जाता है, गांव में अछूतों को नहीं जाने दिया जाता है। इस तरह चारों ओर से प्रतिबंध लाद करके स्पृश्य हिंदू लोगों द्वारा आपके लोगों को परेशान करने की घटनाएं आप में से बहुत से लोगों को मालूम होंगी ही। किंतु यह सब अपने ही समाज पर क्यों होता है, इसके मूल में कौन से कारण हैं? कौन सा रहस्य छिपा हुआ है? यह बात मेरे ख्याल से आप में से बहुत ही कम लोगों की समझ में आती होगी। यह समझ लेना, इसको जान लेना मेरी दृष्टि से बहुत ही आवश्यक है।

अस्पृश्यता का प्रश्न वर्ग-कलह का प्रश्न है। स्पृश्य और अस्पृश्य, इन दो समाजों की यह कलह है। एक समाज पर दूसरे समर्थ समाज द्वारा हो रहे अतिक्रमण का यह प्रश्न है।

उपर्युक्त वर्ग-कलह की जो घटनाएं दी गई हैं, उनका व्यक्ति की अच्छाई और बुराई से कुछ भी सम्बंध नहीं है। यह दोनों की आपसी कलह नहीं है। अस्पृश्यता का प्रश्न वर्ग-कलह का प्रश्न है। स्पृश्य और अस्पृश्य, इन दो समाजों की यह कलह है। एक समाज पर दूसरे समर्थ समाज़ द्वारा हो रहे अतिक्रमण का यह प्रश्न है। यह एक मनुष्य पर हो रहे अन्याय का प्रश्न नहीं है, बल्कि एक वर्ग द्वारा दूसरे वर्ग पर जबर्दस्ती किए जा रहे अतिक्रमण का

प्रश्न है। एक वर्ग द्वारा, जो सदियों से समर्थ है, शक्तिशाली है, ऐसे वर्ग द्वारा निर्धन, निर्बल, दलित वर्ग पर जबर्दस्ती किए जा रहे अतिक्रमण और जुल्म का, शोषण तथा उत्पीड़न का प्रश्न है।

यह वर्ग कलह सामाजिक दर्जे से सम्बंधित वर्ग-कलह है तथाकथित एक ऊंचे वर्ग द्वारा दूसरे दलित वर्ग से व्यवहार करते समय अपना व्यवहार कैसा रखना चाहिए, इसी से संबंधित यह वर्ग-कलह है। इस वर्ग-कलह की जो उपर्युक्त घटनाएं दी गई हैं, उनसे जो एक समस्या स्पष्ट रूप से सिद्ध हो रही है, वह यह है कि अब आप लोग परंपरागत ऊपरी वर्ग से व्यवहार रखते वक्त बराबरी के, समानता के रिश्ते से बरताव रखने का आग्रह करते हो, इसलिए यह वर्ग-कलह उत्पन्न होता है। यदि ऐसा नहीं होता, तो चपाती की मेजबानी देने के कारण, बढ़िया और कीमती कपड़े पहनने के कारण, जनेऊ पहनने के कारण, तांबे और पीतल के बरतन में पानी भरने के कारण, घोड़े पर बारात ले जाने के कारण ऊपरी वर्ग के किसी भी आदमी की हानि नहीं होती है। अपना ही रुपया-पैसा हम खर्च करते हैं। तब भी ऊपरी वर्ग को हमारे इस व्यवहार के प्रति ईर्ष्या, द्वेष और दर्द क्यों होना चाहिए? इस ईर्ष्या और क्रोध का एक ही मकसद है और वह यह है कि इस तरह का समता का व्यवहार उनकी मान-हानि का कारण है। आप निचले वर्ग के हैं, अपवित्र हैं, अतः निचले दर्जे में ही आप रहें, तब तो वे आप लोगों को सुख और शांति से रहने देंगे। अन्यथा, नहीं। आपने अपने परंपरागत स्तर से ऊपर उठने की कोशिश की, तो आपके विरुद्ध कलह की आग भड़कने लगती है। स्पृश्य हिंदुओं के दिल में आपके प्रति आग के शोले भड़क उठते हैं। यह बात आज निर्विवाद रूप से सिद्ध हो चुकी है। उपर्युक्त घटनाओं से एक बात सिद्ध होती है, वह यह है कि अस्पृश्यता नैमित्तिक न होकर नित्य की चीज है और सदियों से चलती आ रही है। यह बात स्पष्ट रूप में कहना हो, तो कहना पड़ेगा कि यह स्पृश्य और अस्पृश्य दो वर्गों का नित्य कलह हमेशा-हमेशा के लिए ऐसा ही रहने वाला है, क्योंकि जिस धर्म के कारण आप लोगों को इतना निचला दर्जा दिया गया है, वह धर्म ऊपरी वर्ग के कथनानुसार सनातन है, उसमें किसी भी प्रकार समयानुकूल परिवर्तन नहीं हो सकता। आप लोग आज जैसे निचले

दर्जे के हैं, उसी प्रकार आपको आगे भी निचले दर्जे का रहना चाहिए। इसका यही मतलब है कि स्पृश्य और अस्पृश्य के बीच यह कलह, यह वर्ग-संघर्ष स्थायी रूप से रहने वाला है। इस वर्ग-संघर्ष से आप लोगों का कैसे बचाव हो? यही मुख्य प्रश्न है और इस प्रश्न पर विचार किए बिना आप लोगों के लिए कोई अन्य रास्ता नहीं है, यह मेरा स्पष्ट मत है।

आप में से जिन लोगों को स्पृश्य हिंदू समाज जिस तरह व्यवहार करे, उसी तरह रहना हो, उनके सेवा धर्म की जूतियों के तले जीना हो, जिनको स्पृश्य हिंदू समाज की दया की भीख पर पलना हो, उन लोगों को इस प्रकार के प्रश्न पर विचार करने की कोई आवश्यकता नहीं है। किंतु जिन्हें स्वाभिमान की जिंदगी प्यारी हो, जिनको मनुष्यता से प्रेम हो, जिन्हें समता, बंधुता स्वतंत्रता और न्याय का जीवन आवश्यक लगता हो, उनके लिए इस प्रश्न पर विचार किए बिना कोई अन्य रास्ता नहीं है।

हिंदू समाज को सुधारना हमारा लक्ष्य नहीं है, यह हमारा कार्य नहीं है। अपनी आजादी के लिए लड़ना और अपनी आजादी हासिल करना यही हमारा लक्ष्य है।

यहां तक हमने ऐहिक (भौतिक) कल्याण के लिए धर्मांतरण की आवश्यकता का दिग्दर्शन किया है। अब तात्त्विक कारणों से धर्मांतरण की आवश्यकता क्यों है? इससे सम्बंधित अपने विचार मैं आपके सामने रख रहा हूं। मेरा विचार है, सबसे पहले यह समझ लेना जरूरी है कि धर्म किसलिए होता है? उसकी आवश्यकता क्या है? धर्म की कई लोगों ने कई प्रकार की व्याख्याएं की हैं, यह आपको मालूम ही होगा। उन सब में अर्थपूर्ण और जिससे सभी सहमत हो सकें, ऐसी एक ही व्याख्या है, 'जिससे सारी प्रजा का धारण होता हो, वही धर्म है।' यही धर्म की उचित व्याख्या है। धर्म की यह परिभाषा सनातनी हिंदुओं के अग्रगण्य संरक्षणशील नेता लोकमान्य तिलक महाशय ने दी है। ऐसी स्थिति में धर्म की परिभाषा के सम्बंध में गलतफहमी पैदा करने का आरोप मुझ पर नहीं लगाया जा सकता। धर्म की यह परिभाषा मेरी नहीं है, फिर भी इसे केवल विवाद के लिए मैंने स्वीकार किया है, ऐसा भी नहीं है। मुझे भी धर्म की यह परिभाषा मंजूर है। 'समाज द्वारा पालन करने के लिए जो बंधन बनाए गए हैं, यह धर्म है', यही मेरी भी धर्म-सम्बंधी कल्पना है। यह परिभाषा वास्तविक दृष्टि

से, तार्किक दृष्टि से योग्य है, फिर भी समाज के बंधन और नियम किस प्रकार के होने चाहिए, इस प्रश्न का लोकमान्य तिलक की उपर्युक्त परिभाषा से कुछ भी उत्तर नहीं मिल रहा है, न यह परिभाषा हमारी शंका का वास्तविक समाधान करं सकती है और न ही किसी भी प्रकार का विश्लेषण प्रस्तुत कर सकती है। समाज के योग्य, धारण के लिए समाज के बंधन किस प्रकार के होने चाहिए, यह प्रश्न फिर भी शेष ही रह जाता है। वस्तुतः यह प्रश्न धर्म की परिभाषा से भी ज्यादा महत्वपूर्ण है। चूंकि 'धर्म कौन-सा', यह उनकी परिभाषा पर आधारित नहीं है, बल्कि प्रतिबंधों के हेतु और स्वरूप पर आधारित है, अतः ज़िन बंधनों से समाज की तमाम प्रजा की धारणा हो सकती है, ऐसे बंधन और नियम कैसे होने चाहिए? मतलब यह कि वास्तविक धर्म का स्वरूप कैसा होना चाहिए? इस प्रश्न पर चिंतन करते समय यह प्रश्न स्वाभाविक रूप से उत्पन्न होता है कि समाज और व्यक्ति के बीच तात्त्विक दृष्टि से सम्बंध क्या है और किस प्रकार का होना चाहिए?

उपर्युक्त प्रश्नों के सम्बंध में आधुनिक समाजशास्त्रियों ने तीन तरह के मत प्रतिपादित किए हैं। कुछ समाजशास्त्रियों की दृष्टि से व्यक्तिमात्र को सुख-प्राप्ति हो, यही समाज-संगठन का अंतिम हेतु है। कुछ समाजशास्त्रियों की दृष्टि में व्यक्तिमात्र को उसके अंगभूत गुणों का, शक्ति का विकास करने की पूरी सुविधा प्राप्त हो और उन गुणों को पूर्णावस्था तक ले जाने में मदद मिले, यही समाज-संगठन का अंतिम हेतु होना चाहिए। कुछ अन्य समाजशास्त्रियों की दृष्टि से समाज संगठन का हेतु व्यक्ति की उन्नति या सुख न होकर आदर्शभूत समाज का निर्माण करना ही है। हिंदू धर्म की संकल्पना इन तीनों अवधारणाओं से एकदम भिन्न है, हिंदू धर्म में व्यक्ति के लिए कुछ भी स्थान नहीं है। हिंदू धर्म की रचना वर्ग की कल्पना पर की गई है। एक व्यक्ति को दूसरे व्यक्ति के साथ किस तरह व्यवहार करना चाहिए, इसकी शिक्षा हिंदू धर्म में मिलती ही नहीं हैं। एक वर्ग को दूसरे वर्ग के साथ किस प्रकार का व्यवहार करना चाहिए, इसके बंधन और नियम हिंदू धर्म में हैं, जिसमें व्यक्ति का कोई स्थान नहीं। ऐसा धर्म मेरी दृष्टि में तो दो कौड़ी का है। ऐसा धर्म मुझे स्वयं स्वीकार नहीं है।

कुछ लोग अछूतों-दलितों की ही सभा में आकर बड़े रोष और आवेश में

स्पृश्यों को गालियां देंगे। कुछ लोग दलितों की ही सभा में आकर बड़ी शेखी के साथ उनको कहेंगे, "मित्रों, आप स्वच्छ रहना सीखो, शिक्षा ग्रहण करो, पढ़ना-लिखना सीखो, अपने पांवों पर खड़े होओ" वगैरह। लेकिन वास्तव में यदि इसके लिए कोई जिम्मेदार है, तो वह है स्पृश्य हिंदू समाज और उसका धर्म। वही इस गुलामी का जन्मदाता है। वही इसके लिए सबसे बड़ा अपराधी है। स्पृश्य वर्ग द्वारा ही सदियों की इस गुलामी को उसी प्राचीन और सनातनी रूप में जिंदा रखा गया। किंतु इस स्पृश्य वर्ग को इस प्रश्न पर संगठित कर उसकी सभा में उनको अक्ल देने का काम ये महाशय क्यों नहीं करते? ये लोग उन्हें इस अपराध के लिए अपराधी क्यों नहीं मानते? अपराधी तो वे स्पृश्य हिंदू हैं और सजा हम लोग भुगत रहे हैं। अक्ल तो उन्हें देनी चाहिए, जो बेअक्ल हैं। सजा तो उन्हें भोगनी चाहिए, जो अपराधी हैं। किंतु यह काम ये तथाकथित समाज सुधारक करने वाले नहीं हैं।

कुछ लोग यह भी कहते हैं कि "हिंदू धर्म में ही रहकर आप अपना आंदोलन जारी रखो, आप और हम मिलकर यह आंदोलन सफल बनाएंगे।" इस तरह की बातें करने वाले सुधारकों को हम एक घटना की याद दिलाना चाहते हैं। पिछले महायुद्ध में एक अमरीकी और एक अंग्रेज आदमी में युद्ध के सम्बंध में जो संवाद हुआ, उसको मैंने पढ़ा है। यह संवाद बहुत ही उद्बोधक है। मेरा ख्याल है, यहां उसकी चर्चा करना बिलकुल उचित है। उनके संवाद का विषय था कि युद्ध कहां तक जारी रखा जाए। अमरीकी के इस प्रश्न का उत्तर देते हुए अंग्रेज ने ऐंठ में कहा, "अंतिम फ्रेंच आदमी के मरने तक हम इस लड़ाई को जारी रखेंगे। हिंदू समाज के सुधारक जब यह कहते हैं कि अछूतपन के विरुद्ध यह लड़ाई हम अंतिम समय तक लड़ेंगे, तब मेरे जैसा आदमी उनके इस कथन का सही अर्थ करता है कि अंतिम अछूत-दलित आदमी के मरते दम तक यह लड़ाई लड़ी जाएगी। दूसरों की गर्दन को खतरे में डालकर लड़ाई के मैदान की ओर बढ़ने वाले योद्धा से जीत की अपेक्षा रखना कहां तक उचित है? यह आप सब लोग जानते हैं। हमारी लड़ाई में यदि हम ही मरने वाले हैं, तो फिर गलत जगह पर लड़ाई करने का मतलब क्या है?

हिंदू समाज को सुधारना हमारा लक्ष्य नहीं है, यह हमारा कार्य नहीं है।

अपनी आजादी के लिए लड़ना और अपनी आजादी प्राप्त करना ही हमारा लक्ष्य है। इससे आगे हमें कुछ भी करना नहीं है। हमारा लक्ष्य है, हमारी स्वतंत्रता, दलित और अछूत समाज की मुक्ति। धर्मांतरण के द्वारा यदि हम अपनी आजादी हासिल कर सकते हैं, तो फिर हमें हिंदू समाज को सुधारने की फालतू जिम्मेदारी अपने सिर पर क्यों लेनी चाहिए और उस लड़ाई में हमें अपनी सामर्थ्य और शक्ति का गलत उपयोग काम के लिए क्यों करना चाहिए? इसमें हमारा लड़ना गलत होगा, हमारी मूर्खता होगी। हिंदू समाज का सुधार करना अस्पृश्यता उन्मूलन आंदोलन का उद्देश्य नहीं है और न किसी को ऐसा समझना चाहिए। इस आंदोलन का मुख्य उद्देश्य है अछूतों को सामाजिक स्वतंत्रता प्राप्त करना। यह आजादी धर्मांतरण के सिवाय अन्य किसी रास्ते से प्राप्त होने वाली नहीं है।

अछूतों को समता की आवश्यकता है और समता की प्राप्ति ही हमारे आंदोलन का वास्तविक उद्देश्य है। किंतु यह कोई नहीं कह सकता कि इस समता को प्राप्त करने के लिए अछूतों को हिंदू धर्म में ही रहना चाहिए, वरना समता प्राप्त होने वाली नहीं है। समता प्राप्त करने के दो रास्ते मुझे दिखाई दे रहे हैं–(1) हिंदू धर्म में ही रहकर या (2) धर्मांतरण द्वारा। हिंदू धर्म में रहकर समता प्राप्त करने का मतलब है, केवल छुआछूत को समाप्त करना। किंतु इससे काम चलने वाला नहीं है। रोटी-व्यवहार और बेटी-व्यवहार होना सबसे महत्वपूर्ण चीज है। वास्तव में समता तभी प्राप्त हो सकती है। इसका अर्थ है कि एक, चातुर्वर्ण्य का मूलोच्छेद होना चाहिए और दो ब्राह्मणी धर्म का विध्वंस होना चाहिए। क्या यह संभव है? यदि संभव न हो, तो हिंदू धर्म में रहकर समता के व्यवहार की अपेक्षा करना समझदारी नहीं होगी और न इस प्रयास से किसी को कुछ सफलता ही मिलने वाली है। इन सबमें यदि सबसे अच्छा और सबसे आसान कोई रास्ता है, तो वह है धर्मांतरण। हिंदू समाज मुस्लिम समाज को समता की दृष्टि से देखता है। मुस्लिम, ईसाई और सिख समाज में समता का व्यवहार है। इसका मतलब ही यह है कि धर्मांतरण से बड़ी आसानी से सामाजिक समता स्थापित की जा सकती है और यह बात सही है, तो फिर धर्मांतरण जैसे सीधे और सरल रास्ते को स्वीकार आप लोगों को क्यों नहीं

करना चाहिए? यह मेरा प्रश्न है। मेरी दृष्टि से धर्मांतरण का रास्ता जैसे अछूतों और दलितों के लिए उसी प्रकार स्पृश्य हिंदुओं के लिए भी हितकारी होगा।

आप लोग जब तक हिंदू धर्म में रहेंगे, तब तक हिंदुओं से छुआछूत के लिए, पानी के लिए, रोटी के लिए, बेटी के लिए, झगड़ना ही पड़ेगा और जब तक आप में और हिंदुओं में यह संघर्ष जारी रहेगा, तब तक आप में और उनमें बखेड़ा बढ़ता ही रहेगा और हमेशा के लिए एक-दूसरे के दुश्मन बने रहेंगे। यदि धर्मांतरण करते हैं, तो झगड़े के मूल कारण ही समाप्त हो जाते हैं। फिर आप लोगों को उनके मंदिरों पर हक जताने का न तो कोई अधिकार रहेगा, न उनके मंदिरों में जाने की कुछ गरज होगी और सहभोज करो, आपस में शादी-ब्याह करो, इस तरह के सामाजिक हकों के लिए आंदोलन करने की, संघर्ष करने की भी आवश्यकता नहीं होगी। इस तरह संघर्ष समाप्त हो गया, तो दोनों वर्गों में स्नेह सम्बंधों का विकास होगा। आज मुस्लिम समाज, ईसाई समाज तथा हिंदू समाज की आपसी स्थिति क्या है, जरा इसे देखिए। आप लोगों की तरह ही हिंदू समाज मुसलमानों और ईसाइयों को अपने मंदिर में आने से रोकता है। वे आप लोगों की तरह ही मुसलमानों और ईसाइयों से रोटी-व्यवहार नहीं रखते हैं। दोनों से बेटी-व्यवहार नहीं करते हैं। यह सब होने पर भी उनमें और हिंदुओं में आज जो सलूक हैं, वह आप में और हिंदुओं में नहीं हैं। यह जो अंतर है, इसका मुख्य कारण यही है कि आप लोगों को हिंदू धर्म में रहने के कारण हिंदू समाज से सामाजिक और धार्मिक हक के लिए लड़ना पड़ रहा है, किंतु आज के मुस्लिम और ईसाई लोगों को हिंदू धर्म की चौखट से बाहर जाने के कारण हिंदू समाज से सामाजिक और धार्मिक हक के लिए लड़ने की, इसके लिए विद्रोह और आंदोलन करने की भी आवश्यकता नहीं है और न तो उन्हें विद्रोही बनना पड़ रहा है।

दूसरी बात यह है कि हिंदू समाज में उन्हें किसी प्रकार का भी हक नहीं होने, मतलब उससे रोटी और बेटी का व्यवहार नहीं होने पर भी हिंदू समाज उन्हें असमान दृष्टि से नहीं देखता है और न ही हिंदुओं द्वारा असमान दृष्टि से उनका कुछ बाल बांका ही होता है।

धर्मांतरण से समता स्थापित हो सकती है, धर्मांतरण से यदि हिंदू और

अस्पृश्य के बीच सलूक उत्पन्न हो सकता है, तो फिर समता का यह सीधा, सरल और हितकारी रास्ता अस्पृश्य दलित समाज को स्वीकार कर लेना चाहिए। इस तरह देखने पर धर्मांतरण का यह रास्ता वास्तविक आजादी की ओर ले जाने वाला है और इसी रास्ते से सही अर्थ में वास्तविक समता प्राप्त होने वाली है। धर्मांतरण का रास्ता पलायनवाद का रास्ता नहीं है। यह एक समझदारी का रास्ता है, मनुष्यता का रास्ता है।

अछूतपन आपकी उन्नति और विकास के मार्ग में स्थायी रूप से रोड़ा बना हुआ है। उस रोड़े को हटाए बिना आपका रास्ता सुगम होने वाला नहीं है और बिना धर्मांतरण किए, यह रोड़ा हटने वाला अथवा नष्ट होने वाला भी नहीं है।

यहां पहले आर्थिक उन्नति या पहले धर्मांतरण, इस प्रश्न पर भी विचार करना मेरी दृष्टि में अत्यावश्यक है। पहले आर्थिक उन्नति होनी चाहिए, ऐसा कहने वाले लोगों का मत मुझे स्वीकार नहीं हो सकता। वस्तुतः पहले धर्मांतरण, फिर आर्थिक उन्नति या पहले आर्थिक उन्नति फिर धर्मांतरण—यह दलील पहले राजनीतिक उन्नति या पहले सामाजिक उन्नति, इस दलील की तरह ही नीरस है। समाज की उन्नति और विकास के लिए कई साधनों की आवश्यकता होती है और वे सभी साधन अपनी-अपनी दृष्टि से आवश्यक होते हैं। उनमें किसी एक चीज का उपयोग पहले करना चाहिए और दूसरी चीज का बाद में, इस तरह का क्रम बनाना कभी संभव नहीं है।

किंतु यदि इस प्रकार का अनुक्रम बनाने का आग्रह हो, यानी पहले धर्मांतरण या पहले आर्थिक उन्नति, इस प्रश्न का उत्तर यदि मुझे देना ही है, तो मैं पहले धर्मांतरण ही कहूंगा। जब तक आप लोगों पर अछूतपन का कलंक लगा हुआ है, तब तक आप की आर्थिक उन्नति कैसे होगी? यही मेरी समझ में नहीं आ रहा है। व्यापार करने के उद्देश्य से आप में से किसी ने यदि किसी प्रकार की कोई दुकान खोलने की कोशिश की और ग्राहकों को यदि यह मालूम हो जाए कि दुकानदार अछूत है, तो आपकी दुकान से कोई भी माल खरीदने वाला नहीं है। इसी तरह यदि आप में से किसी ने नौकरी के लिए अर्जी दी और यह पता लग जाए कि आप अछूत हैं, तो आपको नौकरी कतई मिलने वाली नहीं है। किसी को अपना खेत या अपनी जमीन बेचनी

हो और आप में से किसी ने उसको खरीदने का प्रयत्न किया, पर बेचने वाले को यदि यह मालूम हो गया कि खरीददार तो अछूत है, तो वह आपको किसी भी कीमत पर जमीन नहीं बेचेगा। आर्थिक उन्नति के लिए जो कोई भी रास्ता आप अपनाएं अछूतपन के कलंक के कारण किसी भी मार्ग में आपको यश प्राप्ति होने वाली नहीं है। अर्थात अछूतपन आपकी उन्नति और विकास के मार्ग में स्थायी रूप से रोड़ा बना हुआ है। उस रोड़े को हटाए बिना आपका रास्ता सुगम होने वाला नहीं है और बिना धर्मांतरण किए यह रोड़ा हटने वाला, नष्ट होने वाला नहीं है।

यदि आपको इंसानियत से मुहब्बत है, तो धर्मांतरण करो। समता प्राप्त करनी हो, तो धर्मांतरण करो। आजादी प्राप्त करनी हो, तो धर्मांतरण करो।

मैंने अपना निश्चय कर लिया है। मैं धर्मांतरण करूंगा, यह एकदम निश्चित है। मेरा अपना धर्मांतरण किसी भी प्रकार के व्यक्तिगत और तात्कालिक लाभ के लिए नहीं है। आज मेरे लिए ऐसी कोई चीज नहीं है, जो मैं अछूत रहकर भी प्राप्त नहीं कर सकता हूं। लेकिन धर्मांतरण की मेरी संकल्पना में, उसके मूल में, तात्त्विक बुद्धिनिष्ठता, विवेक, चिरकाल की सुरक्षा, स्व-सम्मान, अस्तित्व तथा अस्मिता की भावना है—कोई अन्य कारण नहीं। हिन्दू धर्म मेरे स्वाभिमान से पटने योग्य नहीं है। आप लोगों के लिए भी तात्त्विक तथा भौतिक-व्यवहारिक लाभ के लिए धर्मांतरण करना आवश्यक है। कुछ लोग तात्कालिक, भौतिक तथा व्यावहारिक लाभ के लिए धर्मांतरण करने की कल्पना पर हंसते हैं और उसकी बुराई करते हैं। ऐसे लोगों को मूर्ख कहने में मुझे किसी भी प्रकार का संकोच नहीं हो रहा है।

मरने पर आत्मा का क्या होगा, यह बताने वाला धर्म अमीरों, सेठ-साहूकारों, जमींदारों, पंडा-पुरोहितों और ब्राह्मणवाद के उपयोग का हो सकता है। फुरसत के समय में ऐसे धर्म पर सोचना, चुटकलों-लतीफों से अपना मनोरंजन करने जैसी बात है। जिन्होंने जिंदगी में बहुत ही सुख और अय्याशी भोगी हैं, उन्हें मरने के बाद सुख कैसे मिलेगा? इसका विचार जिस धर्म में खासतौर पर किया गया है, उसकी ऐसे ही लोगों को आवश्यकता है, जिनके अमन-चैन और शान-शौकत के लिए ही इस धर्म की पैदाइश हुई है, इसमें रहना उन्हीं

के लिए जरूरी है। किंतु जिनकी अमुक एक धर्म में रहने के कारण तबाही, बरबादी हुई है, जिनकी जिंदगी की मिट्टी पलीद हुई है, जिनका जीवन मटियामेट हुआ है, जिनकी बहू-बेटियों की जिंदगी को भरे गांव में बेचा जाता है—उनको गांव में नंगा करके घुमाया जाता है, जिनकी मां और बहनों, बहू-बेटियों के साथ बलात्कार होते हैं, जिनके घर फूंक दिए जाते हैं, जिनको पीने के पानी के लिए तड़प-तड़प कर मरना पड़ रहा है, जो अनाज के एक-एक दाने के मोहताज हैं और कपड़ों व लत्तों से बेजोर हैं, जिनकी इंसानियत को छीन लिया गया है, उन लोगों को धर्म और धर्मांतरण पर तात्कालिक, व्यावहारिक और भौतिक दृष्टि से विचार नहीं करना चाहिए, तो क्या आंख मूंद कर आकाश की ओर देखते रहना चाहिए?

इन हरामखोर अमीरों, सेठ-साहूकारों, जमींदारों, पंडे-पुरोहितों और ब्राह्मणों के अलमस्त धर्म से हमारा कुछ भी लाभ होने वाला नहीं है। ऐसे अलल्टप्पुओं के वेदांत से दीन-दलितों, पद-दलितों को कुछ भी लाभ होने वाला नहीं है। मैं आप लोगों को यह स्पष्ट रूप से कह देना चाहूंगा कि मनुष्य धर्म के लिए नहीं है, बल्कि धर्म मनुष्य के लिए है। संसार में मनुष्य से बढ़कर और कोई चीज नहीं है। धर्म एक साधन-मात्र है, जिसे बदला जा सकता है, फेंका जा सकता है।

यदि आपको इंसानियत से मुहब्बत हो, तो धर्मांतरण करो। हिंदू धर्म का त्याग करो। तमाम दलित-अछूतों की, सदियों से गुलाम रखे गए वर्ग की मुक्ति के लिए एकता, संगठन करना हो, तो धर्मांतरण करो। समता प्राप्त करनी हो, तो धर्मांतरण करो। आजादी प्राप्त करनी हो, तो धर्मांतरण करो। अपने जीवन की सफलता चाहते हो, तो धर्मांतरण करो। मानवीय सुख चाहते हो, तो धर्मांतरण करो। हिंदू धर्म को त्यागने में ही तमाम दलित-पद्दलित, अछूत, शोषित, पीड़ित वर्ग का वास्तविक हित है, यह मेरा स्पष्ट मत बन चुका है।

जो भी मुझे कहना आवश्यक था, मैंने कह दिया है। गौतम बुद्ध के जीवन से सम्बंधित एक घटना मुझे याद है। घटना बुद्ध के महापरिनिर्वाण के पहले की है। भगवान बुद्ध के परम शिष्य भिक्खु आनंद जब उनके पास जाते हैं और कहते हैं कि आप अपने महापरिनिर्वाण के पहले संघ का कुछ मार्गदर्शन करें, तब भगवान बुद्ध भिक्खु आनंद से कहते हैं, "आनंद! संघ को

मुझसे क्या चाहिए? जो कुछ मुझे कहना था, वह मैंने कह दिया है। जो कुछ मैंने जाना था, वह संघ के सामने रख दिया है। बुद्ध रहस्यवादी नहीं हैं आनंद! अपने दीपक आप बनो, स्वयं प्रकाशित होओ। खुद पर भरोसा रखो, स्वयं की शरण में जाओ। सच्चाई पर अटल रहो।'' मैं बुद्ध के इन वचनों की याद दिलाकर अंत में यही कहना चाहता हूं कि ''आप अपना आधार बनो। अपनी बुद्धि की शरण में जाओ। अन्य किसी के बहकावे में मत जाओ। सत्य का आधार लो। सत्य की शरण जाओ''। बुद्ध का यह मार्गदर्शन आप सबके लिए प्रेरणादायी सिद्ध होगा और यदि आपने बुद्ध के इन वचनों को ध्यान में रखा, तो मुझे इस बात का पूरा यकीन है कि आप लोग जो भी निश्चय करेंगे, वह गलत नहीं होगा।
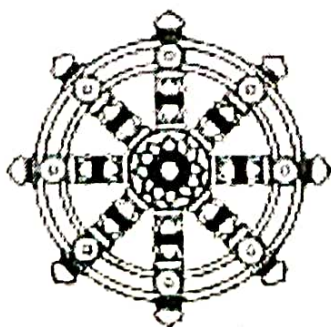
15 अक्टूबर 1956 को नागपुर में दिया गया ऐतिहासिक धम्मोपदेश

हम बौद्ध क्यों बनें ?

बौद्ध धम्मानुयायियो ! मैं आज अपने भाषण में इस महत्वपूर्ण प्रश्न पर कि मैंने भगवान बुद्ध द्वारा चलाए गए धम्म का पुनरुद्धार तथा प्रचार के महान कार्यभार को अपने कंधों पर क्यों लिया है, अपने विचार प्रकट करना चाहता हूं। कई विचारशील व्यक्तियों का और मेरा अपना विचार है कि कल का धर्मांतरण समारोह आज होना चाहिए था और आज का यह धम्म परिवर्तन अभिभाषण धर्मांतर समारोह से पूर्व कल होना चाहिए था। किंतु जो होना था, सो हुआ। अब आज इस प्रश्न पर विचार करना कोई महत्व नहीं रखता है।

नागपुर ही क्यों ?

बहुत से लोगों ने मुझ से यह प्रश्न किया है कि इस महान समारोह के लिए नागपुर ही क्यों चुना गया ? अन्य कोई स्थान क्यों नहीं चुना ? कुछ का कहना है कि शहर में राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ क़ी सेना का केंद्र होने के कारण उन्हीं की आंखों के सामने कुछ करके दिखाने के लिए मैंने इस स्थान को चुना है। लेकिन यह बात सच नहीं है। मेरा ऐसा उद्देश्य नहीं है। नाक को खुजाकर किसी के लिए भी अपशकुन करने की मेरी कोई इच्छा नहीं है और न ही मेरे पास ऐसी निरर्थक बातों के लिए समय ही है। जो महान कार्य मैंने अपने कंधों पर लिया है, वह इतना महत्वपूर्ण है कि उसके संबंध में एक-एक मिनट भी मेरे लिए बहुत महत्व रखता है। इस स्थान को चुनते समय कभी भूल से भी आर.एस.एस. का विचार मेरे मन में कभी नहीं आया।

जिन लोगों ने बौद्ध धम्म के संबंध में इस देश के प्राचीनकाल के इतिहास का अध्ययन किया है, उन्हें मालूम है कि भगवान बुद्ध के धम्म को फैलाने का महान श्रेय नाग जाति के लोगों को है। नाग लोग आर्यों के कट्टर शत्रु थे। आर्यों और अनार्यों में आपस में कई बड़ी-बड़ी लड़ाईयां हुईं। आर्य

लोग नाग लोगों का समूल नाश करना चाहते थे। इस विषय में बहुत सी कहानियां पुराणों में मिलती हैं। अर्जुन ने नागों को जलाया था। अगस्त मुनि ने एक 'सर्प' नाग की रक्षा की थी। उसी नाग के वंशज आप लोग हैं। जिन नागों को छल और कपट से पतित बनाया गया था, उन्हें उठाने के लिए एक महापुरुष की आवश्यकता थी और वे उन्हें भगवान बुद्ध के रूप में मिले।

नागों ने ही सारे भारत में बौद्ध धम्म का प्रचार किया। आप उन्हीं नागों की संतान हैं। वीर नागों की प्रमुख आबादी नागपुर में थी। नागों की आबादी के कारण इस नगर को नागपुर कहा गया है। इस नागपुर से 27 मील की दूरी पर बहने वाली नदी का नाम भी 'नाग' पड़ा हुआ है। इससे ऐसा मालूम पड़ता है कि इसी नदी के आसपास नागों की आबादी थी। नागपुर को इस महान समारोह के लिए चुने जाने का यथार्थ में कारण भी यही है। दूसरा कोई कारण इसके पीछे नहीं है। इसलिए इसे कोई भी गलत न समझे। किसी और बात पर राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के साथ विरोध संभव है, लेकिन इस स्थान को किसी ने भी उनको चिढ़ाने के लिए पसंद नहीं किया है।

विरोधियों की बौखलाहट

जिस महान कार्य को मैंने प्रारंभ किया है और जिसे आप सब लोगों ने स्वीकार किया है। उसकी बहुत से समाचार पत्रों ने बहुत ही कटु आलोचना की है। उनके मतानुसार मैं अपने बंधुओं को गलत मार्ग पर ले जा रहा हूं। ये अस्पृश्य ऐसे ही अछूत बने रहेंगे। इस धर्मांतर से हमारा कुछ भी भला नहीं होगा। कई पत्रों ने तो यहां तक भ्रामक तथा मिथ्या बातें कही हैं कि आज जो अछूतों को राजनैतिक अधिकार मिले हुए हैं, इस धर्मांतर से वे सब समाप्त हो जाएंगे। यह सब पागलपन का प्रचार है। उन लोगों का कहना है कि नए रास्ते से न जाकर पुराने रास्ते से या उसी पगडंडी से ही हमें जाना चाहिए। संभव है कि ऐसे व्यक्तियों का थोड़ा सा प्रभाव हमारे तरुणों और बुजुर्गों पर अवश्य पड़े, इसलिए मैं इस प्रश्न का जवाब दिए बगैर नहीं रहना चाहता। संशय को दूर करने से हमारे आंदोलन को बल मिलेगा। इसलिए इसी प्रश्न पर मैं बहुत कुछ कहना चाहता हूं।

"महार-चमार मरी हुई गाय-भैसों को न उठाएं और न मरी हुई गाय भैंसों का मांस ही खाएं।" इस बात का प्रचार मैंने आज से 30 वर्ष पूर्व किया था। इस प्रचार से सवर्ण हिंदुओं को बड़ा आघात पहुंचा। मैंने उनसे पूछा कि गाय-भैसों का दूध तुम पिओ और मरने पर उसे उठाकर हम बाहर फेकें, ऐसा क्यों ? अगर वे अपनी बूढ़ी मां के मरने पर उसे खुद उठा ले जाते हैं, तो मरी हुई गाय और भैंस को स्वयं क्यों नहीं उठाकर ले जाना चाहते ? जब मैंने ऐसे प्रश्न उनके सामने रखे तो ये लोग बहुत चिढ़ गए। मैंने उनसे कहा कि अगर तुम अपनी मरी हुइ मां को बाहर फेंकने के लिए हमें दे दो, तो हम अवश्य ही मरी हुई गाय को भी उठा कर ले जाएंगे। इस पर 'केसरी' (ब्राह्मणों का समाचार पत्र) में एक चित्तपावन ब्राह्मण ने कई पत्र प्रकाशित करके यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया कि प्रत्येक वर्ष मृत पशुओं के न उठाने से महार-चमारों को कितना नुकसान उठाना पड़ेगा। इसके लिए उन्होंने कई प्रकार के आंकड़े देकर अपनी बात को सिद्ध करने का प्रयत्न किया। उनका कहना था कि एक मरे हुए पशु की हड्डी, दांतों, सींगों, अंतड़ियों आदि के बेचने से हर चमार को 500 या 600 रुपयों का वार्षिक लाभ होता है। इसलिए मैं उनका नुकसान करा रहा हूं। मेरे अस्पृश्य लोगों को ऐसा लगा कि आखिर मैं अपने लोगों के लिए यह क्या करने जा रहा हूं ? एक बार मैं संगमनेर (वर्तमान कर्नाटक प्रांत में, बेलगांव नामक एक तहसील) गया हुआ था। जिसने 'केसरी' में पत्र प्रकाशित किए थे, वह मुझ से वहां पर मिला। उसने वही प्रश्न दोहराए। मैंने उसको जवाब दिया कि तुम्हारे प्रश्नों का जवाब मैं समय आने पर दूंगा। मैंने 'केसरी' में प्रकाशित हुए सभी पत्रों के प्रश्नों का खुली सभा में यों जवाब दिया कि मेरे लोगों के पास खाने के लिए अन्न नहीं है। स्त्रियों के पास तन ढंकने के लिए कपड़ा नहीं है। रहने के लिए मकान नहीं है। उनके पास जोतने के लिए जमीन नहीं है। इसलिए वह दलित हैं महादुखी हैं। मैंने सभी उपस्थित लोगों से इसके कारण पूछे। सभा में से किसी ने भी उत्तर नहीं दिया। यहां तक कि 'केसरी' में पत्र लिखने वाले सज्जन ने भी जो उस समय सभा में मौजूद था, उसने भी जवाब नहीं दिया।

तब मैंने कहा भले लोगो ! हम अपने संबंध में खुद ही सोच लेंगे। अगर

तुम्हें हमारे लाभ की चिंता है, तो तुम अपने संबंधियों को एक-एक गांव में भेज दो और उनसे कहो कि वे वहीं पर जाकर रहें और गांव में मरे हुए पशुओं को उठाकर फेकें, जिससे उन्हें 500 रुपये का वार्षिक लाभ हो सके। इसके अलावा ऐसा करने पर उन्हें 500 रुपये इनाम मैं स्वयं भी दूंगा। इस प्रकार उन्हें दूगना लाभ होगा। इस मौके को क्यों छोड़ते हो ? हमारा नुकसान होगा पर तुम्हें तो लाभ होगा। लेकिन आज तक कोई भी सवर्ण हिंदू इस काम के लिए आगे नहीं आया। आखिर इनके पेट का पानी हमारी उन्नति को देखकर क्यों हिलता है ? क्यों इनके पेट में हमारी उन्नति की बात सुनकर दर्द होता है। अपने लोगों के लिए अन्न, वस्त्र, मकान और जमीन के लिए उनकी देखभाल मैं स्वयं करूंगा। इसकी चिंता आप न करें।

इस काम को हमने किया तो लाभ होता है और आपने किया तो नुकसान होता है ? उठाइए मरे हुए पशुओं को और लीजिए फायदा। इसी प्रकार कुछ लोगों का कहना है कि हमें विधान सभा में कुछ स्थान मिले हैं, तो उन्हें हम क्यों छोड़ दें ? मैं उनसे कहता हूं कि ब्राह्मण, राजपूत आदि को महार, चमार, भंगी बनकर उन स्थानों को भर लीजिए। हमारे स्थानों के खाली होने पर तुम्हें रोना क्यों आता है ? मनुष्य को इज्जत प्यारी होती है, लाभ प्यारा नहीं होता। हम सम्मान के लिए संघर्ष कर रहे हैं।

मुंबई में व्यभिचार करने का एक मोहल्ला है। वहां की स्त्रियां सवेरे 8 बजे सो कर उठती हैं। सवेरे उठते ही ईरानी होटलों में काम करने वाले मुसलमान लड़कों को कहती हैं, "ओ सुलेमान ! एक प्लेट कीमा (मांस) और रोटी ले आ।" वे कीमा और रोटी खाती हैं, चाय पीती हैं, पर हमारी औरतों को तो कीमा-रोटी खाने को नहीं मिलता। केवल चटनी और रूखी-सूखी रोटी मिलती है। इसी से वे सब संतुष्ट हैं। वे भी यदि चाहें, तो ऐसी बेइज्जती की जिंदगी विता सकती हैं, लेकिन उन्हें स्वाभिमान प्यारा है, इज्जत प्यारी है। हम जो लड़ रहे हैं, वह सब कुछ इज्जत के लिए ही तो लड़ रहे है। मनुष्य का जन्मसिद्ध अधिकार है, 'इज्जत से रहना।' इसकी पूर्ण प्राप्ति तक जितना अधिक हम आगे जा सकते हैं, उतना ही आगे जाने की हमारी तीव्र इच्छा है। इसके लिए हम जितना भी त्याग करें, कम है।

समाचार पत्र वाले गत चालीस वर्षों से मेरे पीछे पड़े हुए हैं। अब मैं उनसे कहना चाहता हूं कि भाइयो ! अब तो आप कम से कम कुछ समझदारी और गंभीर भाषा में बोलिए। हमें आज कुछ और बातों की भी आवश्यकता है। हम लोगों के बौद्ध बन जाने पर वे सब बातें कुछ हद तक पूरी होनी चाहिए, मैं सभी कुछ दिलवाऊंगा। ऐसा मेरा पूर्ण विश्वास है। मेरे मरने के बाद क्या होगा, इस संबंध में कुछ भी नहीं कह सकता। इस आंदोलन के लिए बहुत कुछ करना होगा। हमारे बौद्ध धम्म स्वीकार करने पर बहुत कुछ होगा। आपत्तियां आने पर उनका निराकरण किस प्रकार करेंगे, कैसी युक्तियां देनी होंगी ? इन सभी बातों पर आद्योपांत विचार मैंने किया है। इन बातों का जवाब देने के लिए मेरे पास काफी मसाला है। इन अधिकारों को अपने लोगों को मैंने ही दिलवाया है और मैं ही उन्हें दिलवाऊंगा। जिसने आपको इन अधिकारों को दिलवाया है, वही इन अधिकारों को भी दिलवाएगा। इसलिए आप मेरे ऊपर पूर्ण भरोसा रखिए और जो कुछ मैं कह रहा हूं, उस पर पूर्ण विश्वास रखकर चलिए। विरोधियों की आलोचना में कुछ भी सच्चाई नहीं है। इसलिए उनकी भ्रामक बातों पर विचार ही न करें।

मैं नरक से मुक्त हुआ हूं

मुझे इस बात को देखकर बड़ा आश्चर्य होता है कि हमारे इस धर्म परिवर्तन की बातें सभी जगह हो रही हैं, लेकिन किसी ने मुझ से यह नहीं पूछा कि मैंने बुद्ध धम्म ही क्यों स्वीकार किया है ? आखिरकार मैंने सभी धर्मों को छोड़कर बौद्ध धम्म को ही क्यों अपनाया ? धर्मांतर के किसी प्रकार के आंदोलन में यह एक महत्त्पूर्ण प्रश्न है। धर्मांतर करते समय इन बातों का विचार करना चाहिए कि किस धर्म को और क्यों कर अपनाया जाए ? मैंने हिंदू धर्म का त्याग करने का आंदोलन सन् 1935 में शुरू किया था और बराबर इस आंदोलन को चला रहा हूं। येवला (नासिक जिला) में इस आंदोलन को चलाने के लिए अप्रैल 1935 में बड़ा जलसा किया था और उसमें एक प्रस्ताव द्वारा हमने निर्णय लिया था कि हम इस हिंदू धर्म को त्याग देंगे। मैंने उसी समय यह प्रतिज्ञा की थी कि 'यद्यपि मैंने हिंदू धर्म में जन्म अवश्य लिया है, तो भी हिंदू धर्म में रह कर मरूंगा नहीं।' ऐसी प्रतिज्ञा मैंने

आज से 21 वर्ष पूर्व की थी और उसे आज पूरा कर दिखाया। इस धर्मांतर से मैं बहुत ही खुश हुआ हूं और प्रफुल्लित हो उठा हूं। मुझे ऐसा मालूम होता है कि मैं नरक से छुटकारा पा गया हूं। मुझे कोई अंधभक्त नहीं चाहिए। जो लोग बौद्ध धम्म में आना चाहते हैं, उन्हें खूब सोच समझकर आना चाहिए, ताकि वे आगे इस धम्म में सुदृढ़ हो कर रह सकें।

कार्ल मार्क्स का पथ और दलित

मनुष्यमात्र की उन्नति के लिए धर्म की आवश्यकता है। मैं यह अच्छी तरह जानता हूं कि कार्ल मार्क्स के सिद्धांतों से एक नया मत निकला है। उनके कथनानुसार धर्म में कुछ भी नहीं है। उनके लिए धर्म का कोई महत्व नहीं है। उनका धर्म केवल यह है कि उन्हें प्रातःकाल मक्खन लगे हुए टोस्ट, दोपहर को खाने के लिए स्वादिष्ट भोजन, सोने के लिए अच्छा बिस्तर और देखने के लिए सिनेमा चाहिए। यही उनका दर्शन है। मैं ऐसे दर्शन का हामी नहीं हूं। मेरे पिता की निर्धनता के कारण मुझे ऐसा कोई सुख नहीं मिला। अपने जीवन में जितना कष्ट मैंने सहन किया है, उतना किसी ने सहन नहीं किया होगा। इसलिए गरीबों का जीवन किस प्रकार कष्टमय होता है, इसे मैं भली प्रकार से जानता हूं। आर्थिक दृष्टिकोण को सामने रखकर हमारा आंदोलन चलना चाहिए और मैं भी इस बात का विरोधी नहीं हूं। हमारी आर्थिक उन्नति होनी चाहिए, इसलिए मैं आज तक अपने लोगों की आर्थिक और मानसिक उन्नति के लिए संघर्ष करता रहा हूं। यही नहीं बल्कि मानव-मात्र की आर्थिक उन्नति होनी ही चाहिए, ऐसी मेरी निश्चित मान्यता है।

पशु और मनुष्य

इस संबंध में मेरे अपने विचार हैं। पशुओं और मनुष्यों में बड़ा अंतर है। पशुओं को रोज खाने के लिए चारा चाहिए, किंतु मनुष्य के लिए अन्न चाहिए। पशुओं को चारे के सिवा किसी और चीज की आवश्यकता नहीं होती, परंतु मनुष्य के शरीर के साथ मन भी है। इन दोनों बातों पर विचार करना चाहिए। मन का विकास होना बहुत जरूरी है। मन को पवित्र और सुसंस्कारित बनाना भी जरूरी है। जिन देशों के लोग यह समझते हैं कि

खाने-पीने का सुसंस्कारित मन के साथ कोई संवंध नहीं है, ऐसे देश और वहां की जनता से संबंध रखना मेरे लिए लाभप्रद नहीं होगा। जनता से संवंध रखते हुए इस बात का भी विचांर करना चाहिए कि जिस प्रकार शरीर निरोग होना चाहिए, उसी प्रकार शरीर को सुदृढ़ वनाने के लिए मन का भी सुसंस्कारित होना बहुत जरूरी है, अन्यथा यह कहना निरर्थक होगा कि मनुष्य विकास के पथ पर अग्रसर हो रहा है या उन्नति कर रहा है।

उत्साह का मूल कारण सुसंस्कारित मन

मनुष्य का शरीर या मन रोगी क्यों रहता है ? इसका कारण यह है कि मनुष्य को जब तक शारीरिक पीड़ा रहती है, तव तक उसका मन अप्रसन्न रहता है। मन में उत्साह न हो तो उसका किसी भी कीमत पर उत्थान नहीं हो सकता। आखिर यह उत्साह क्यों नहीं रहता ? उसका प्रथम कारण यह है कि मनुष्य को ऐसा विश्वास हो गया है कि उसे ऊपर उठने का अवसर नहीं मिल सकता। जब उसके पास आशा ही नहीं है, तो उसके पास उत्साह के लिए स्थान कहां होगा ? वह रोगी है। जिस मनुष्य को अपने कर्म का फल मिलता है, उसी को आनंद मिलता है। स्कूलों में अगर मास्टर यह कहना शुरू कर दे कि यह कौन है ? यह तो चमार है ? यह चमार क्यों परीक्षा में प्रथम आया? इसे प्रथम वर्ग किस लिए चाहिए ? इसे चौथे वर्ग (डिवीजन) में पास होना चाहिए, प्रथम वर्ग में पास होना तो बामणों का ही काम है। ऐसे हालात में उस चमार छात्र को क्या उत्साह मिलेगा। उसकी तरक्की कैसी होगी ? उत्साह निर्माण का मूल कारण तो मन है, जिसका शरीर और मन मजवूत होता है, वह धैर्यवान होता है। ऐसे व्यक्ति के सामने कोई विपत्ति नहीं रहती। हर मुसीवत का मुकाबला करने का उसमें स्व-विश्वास होता है। इसी से उसमें उत्साह उत्पन्न होता है। हिंदू धर्म का दर्शन ऐसी असमानता और ऐसे अनेकानेक अन्याय-पूर्ण सिद्धांतों पर आधारित है कि इस धर्म से किसी को कोई उत्साह आज तक नहीं मिला। अगर यह धर्म हजारों वर्षों तक भी रह सकेगा तो केवल इतना ही होगा कि पेट भरने के लिए कुछ वाबू पैदा होंगे, जो अपने पेट भरने के सिवाय और कुछ भी नहीं कर सकेंगे। फिर ऐसे क्लर्कों

की रक्षा करने की आवश्यकता होगी। आम अछूतों की भलाई के बारे में न तो कभी सोचेगा और न उनकी कभी भलाई ही होगी।

मनुष्य के उत्साह का कारण अगर कोई है, तो वह है मन। आप मिल के मालिकों को जानते हैं। वे मिलों में मैनेजर नियुक्त करते हैं। उनका काम मिल के मजदूरों से काम लेना होता है। ये मिल-मालिक किसी न किसी व्यसन में फंसे होते हैं। क्योंकि उनका मन स्वच्छ और सुसंस्कारित नहीं होता। अपने मन का विकास करने के लिए हमने आंदोलन किया। मैंने शिक्षा कैसे प्राप्त की ? मैं गरीबी के कारण लंगोटी में ही स्कूल जाता था। स्कूल में मुझे पीने को पानी भी नहीं मिलता था। पानी के बगैर मैंने कई दिन बिताए। मुंबई नगर के एल्फिंसटन् कॉलेज में भी यही हाल था। अगर ऐसी ही परिस्थिति रही, तो इससे दूसरी परिस्थिति और क्या पैदा हो सकती है ? केवल गुलाम क्लर्क ही पैदा होंगे, तब अछूतों की भलाई क्या होगी?

क्लर्क नहीं, शासक बनो

ब्रिटिश राज में मैं दिल्ली में एक्जीक्यूटिव कौंसिलर था। उस समय भारत के वाइसराय लार्ड लिनलिथगो थे। उनसे मैंने एक दिन कहा कि आप मुसलमानों के नाम पर अलीगढ़ विश्वविद्यालय को तीन लाख रुपये और हिंदुओं के नाम पर बनारस विश्वविद्यालय को तीन लाख रुपये देते हो, परंतु हम न तो हिंदू हैं और न मुसलमान। अगर हमारे लिए आप कुछ करना चाहें, तो हमारे लिए भी इससे कई गुना खर्च करना पड़ेगा। अगर आप इतना न कर सकें, तो कम से कम मुसलमानों के लिए जितना आप करते हैं, उतना ही हमारे लिए भी करें।

इस संबंध में लिनलिथगो ने मुझे कहा कि मुझसे जो कुछ भी उनसे कहना है, मैं उसे लिख कर दूं। उनके कथनानुसार मैंने इस संबंध में एक मेमोरेंडम (मांग पत्र) लिख कर उन्हें दे दिया। यूरोपियन लोग काफी सहानुभूति रखने वाले होते थे। उन्होंने मेरे कथन को मान लिया, परंतु इस पैसे को किस प्रकार खर्च किया जाए, इसका निर्णय नहीं हो पाया। उनका विचार था कि पैसे को हमारी अशिक्षित लड़कियों पर खर्च किया जाए। उनके लिए बोर्डिंग

खोले जाएं और उसी पर यह पैसा खर्च किया जाए। अगर इस पैसे को इस प्रकार खर्च करके हमारी केवल अशिक्षित लड़कियों को शिक्षित किया गया, तो उन्हें अच्छा खाना बनाने के लिए अच्छा-अच्छा सामान भी चाहिए। यह सामान कहां से आएगा ? क्योंकि हमारी जनता अत्यंत गरीब है। हमारे लोग अपनी शिक्षित लड़कियों की इच्छा पूरी करने के लिए पैसा कहां से लाएंगे ? तब इस शिक्षा का परिणाम क्या होगा ? अन्य सब बातों पर तो सरकार ने पैसा खर्च किया, लेकिन शिक्षा पर खर्च होने वाले पैसे को रोके रखा।

एक बार मैं लार्ड लिनलिथगो के पास फिर गया और उनसे मैंने खुले दिल से शिक्षा संबंधी खर्चे पर बातें कीं। उनसे मैंने कहा कि अगर आपको गुस्सा न आए तो मैं एक प्रश्न पूछना चाहता हूं। उन्होंने कहा, "हां ! पूछिए।" मैंने पूछा कि क्या यह सच नहीं है कि मैं अकेला 500 ग्रेज्युयेट्स के बराबर हूं। उन्होंने कहा, "हां, मैं मानता हूं।" फिर मैंने उनसे पूछा कि इसका क्या कारण है ? इस पर उन्होंने कहा कि उन्हें मालूम नहीं। तब मैंने उनसे कहा कि अपनी मेहनत से प्राप्त की गई मेरी विद्वता इतनी है कि मैं इस विद्वता के बल पर शासन के किसी भी पद पर बैठ सकता हूं। मुझे ऐसे ही विद्वान चाहिए, जिस प्रकार किले में निशाने पर बैठकर योद्धा सैनिक शत्रु को परास्त कर देते हैं, उसी प्रकार मेरी समझ के अनुरूप ऐसे विद्वान व्यक्ति जो शासन के पदों पर बैठकर मेरे गरीब और निरीह लोगों की अच्छी तरह देखरेख कर सकें। अगर आपको हमारे लोगों की भलाई ही करनी है, तो ऐसे ही लोगों को पैदा करना होगा। तभी इन अछूतों की भलाई हो सकेगी। केवल क्लर्कों के पैदा करने से कुछ नहीं होने वाला ? मेरे इस कथन को लार्ड लिनलिथगो ने माना और उसी वर्ष 16 विद्यार्थियों को उच्च शिक्षा के लिए विलायत भिजवा दिया।

चातुर्वर्ण्य, गांधी और धर्म

इस देश में हम हजारों वर्षों से बहुत ही निरुत्साही अवस्था में रहते चले आ रहे हैं। जब तक यह अवस्था रहेगी तब तक अपनी उन्नति के लिए हममें उत्साह पैदा होना संभव नहीं है। अन्याय और असमानता पर आधारित इस

हिंदू (बामन) धर्म में रहकर हम कुछ भी नहीं कर सकते। मनुस्मृति में चातुर्वर्ण्य का कथन (समर्थन) है। यह चातुर्वर्ण्य व्यवस्था मनुष्य मात्र की उन्नति के लिए महाघातक है। शूद्रों का काम केवल सेवा ही करना है। उन्हें शिक्षा से क्या तात्पर्य ? इस समस्या का हल कौन करेगा ? बामण, क्षत्रिय और वैश्यों को शूद्रों की गुलामी से हर प्रकार का फायदा है। शूद्रों के पास गुलामी के सिवा और क्या है ? चातुर्वर्ण्य व्यवस्था फूंक मारने से उड़ाई नहीं जा सकती। यह केवल रूढ़ी नहीं है, बल्कि धर्म बन गई है।

हिंदू धर्म में कोई समानता नहीं है। मैं एक बार गांधी जी से मिलने गया। गांधी जी ने मुझसे कहा कि वे चातुर्वर्ण्य को मानते हैं, लेकिन यह चातुर्वर्ण्य कौन सा और कैसा है ? इस बात को समझाने के लिए मैंने अपनी अंगुलियों को एक के ऊपर एक करके बताते हुए कहा कि यह चातुर्वर्ण्य सीधा है या उल्टा ? इसका आदि और अंत कहां है ? गांधी जी इस बात का जवाब नहीं दे सके। जिन लोगों ने हमारा नाश किया है, उनका यह अन्यायपूर्ण धर्म इनके सामने ही नष्ट हो जाएगा। मैं हिंदू धर्म पर बेकार ही आरोप नहीं लगाता। इस पापमयी धर्म में किसी का भी उद्धार नहीं हो सकता। यह धर्म नष्ट हो चुका है। इसमें कोई जान नहीं है।

अगर हमें शस्त्र धारण करने का अधिकार होता

हमारा देश विदेशियों का गुलाम क्यों बना ? यूरोप में सन् 1939 से 1945 तक दूसरा महायुद्ध हुआ। जितनी फौज लड़ाई में लड़ती थी, उतनी ही फौज रोज भर्ती हो जाती थी। उस समय किसी ने यह नहीं कहा कि युद्ध जीतने का श्रेय किसी एक को ही प्राप्त है। यह सभी देशवासियों का महान श्रेय था। हमारे देश की तो बातें ही निराली रही हैं। क्षत्रिय मर गए तो सारा देश मर गया। यही होता रहा है। इसलिए हमारा देश कई बार गुलाम बना। अगर हम लोगों को शस्त्र धारण करने का अधिकार होता, तो यह महान देश कभी गुलाम न बनता और न कोई इस देश को आक्रमण करके जीत ही सकता था।

बौद्ध धम्म से ही इस देश की भलाई होगी

हिंदू धर्म में रहकर किसी का उद्धार नहीं हो सकता। हिंदू धर्म की रचना

के अनुसार कुछ तथाकथित सवर्णों को सदियों से लाभ पहुंच रहा है। मेरे इस कथन में तिल मात्र भी झूठ नहीं है। शूद्रों और अछूतों की क्या भलाई हुई ? बामन की औरत गर्भवती हुई कि उसका ध्यान सीधा हाईकोर्ट की ओर जाता है कि वहां पर जज का कोई पद खाली है या नहीं और जब हमारी औरत गर्भवती होती है, तब उसका ध्यान इस बात की ओर जाता है कि कमेटी में कोई झाड़ू देने वाले के लिए जगह खाली है या नहीं। यह दुराव्यवस्था हिंदू धर्म व्यवस्था के कारण ही है। इसमें रहकर हमारी क्या भलाई हो सकेगी ? अगर हमारी भलाई होगी, तो केवल बौद्ध धम्म में ही होगी।

भगवान के धम्म को बामणों ने भी अपनाया और शूद्रों ने भी। उन सभी भिक्खुओं को आदेश देते हुए भगवान बुद्ध ने कहा था कि—

"हे भिक्खुओ ! आप लोग कई देशों और भिन्न-भिन्न जातियों से आए हुए हैं। जिस प्रकार आपके देश-प्रदेश में अनेक नदियां बहती हैं, उनका अलग अस्तित्व दिखाई देता है। जब ये नदियां महासागर में मिल जाती हैं, तब अपने पृथक अस्तित्व को खो बैठती हैं। वे सब समुद्र में समा जाती हैं। बौद्ध धम्म समुद्र की ही भांति है। इस संघ में सभी एक हैं और सभी बराबर हैं। समुद्र में गंगा या यमुना के मिल जाने पर उसके पानी को अलग से पहचानना कठिन है। इसी प्रकार आप लोगों के बौद्ध संघ में आने पर सभी एक हैं। सभी समान हैं। इस प्रकार की बातें कहने वाला एक ही महापुरुष हुआ है और वह महापुरुष हैं भगवान बुद्ध।

मेरे ऊपर जबर्दस्त जिम्मेदारी है

जब लोग मुझ से यह प्रश्न करते हैं कि मैंने धर्मांतर करने के लिए इतना समय क्यों लगाया ? इतने दिन तक मैं क्या कर रहा था ? ये प्रश्न महत्वपूर्ण हैं। धर्म के तत्त्वों को दूसरों को समझाना आसान काम नहीं है। यह अकेले व्यक्ति का काम भी नहीं है। धर्म के संबंध में आप विचार करके देखेंगे तो मेरी बात आपकी समझ में आ जाएगी। आज मेरे ऊपर कितनी बड़ी जिम्मेदारी है, उतनी संसार में किसी पर नहीं है। यदि मैं अधिक समय तक जीवित रहा, तो वह सब काम पूरा करके दिखलाऊंगा। (बाबा साहेब

जिंदाबाद के नारों से आकाश गूंज उठा। कुछ समय तक चारों ओर इन्हीं नारों और तालियों की गड़गड़ाहट की आवाजें सुनाई देती रही।)

अछूत कहकर नहीं घूमना

कुछ लोग कहेंगे कि अछूतों के बौद्ध बनने पर क्या होगा ? इस संबंध में मेरा इतना ही कहना है कि इस प्रकार का प्रश्न आप लोगों को नहीं पूछना चाहिए क्योंकि ऐसे प्रश्न धूर्त्ततापूर्ण हैं। धनी लोगों को धर्म की आवश्यकता नहीं है। उनमें जो लोग ऊंचे पदों पर आसीन हैं, उनके पास रहने के लिए अच्छा बंगला है, उनकी सेवा करने के लिए उनके पास धन है, उनके पास नौकर-चाकर हैं और उनके पास सब कुछ है। ऐसे लोगों द्वारा बौद्ध धम्म को अपनाने या उस पर विचार करने की कोई आवश्यकता नहीं है।

धर्म की आवश्यकता गरीबों के लिए है

धर्म की जरूरत केवल गरीबों के लिए होती है। दुखी और पीड़ित लोगों के लिए धर्म की जरूरत होती है। गरीब मनुष्य सदा ही आशा पर जीता है। जीवन का मूल आशा में है। अगर यह आशा नष्ट हो गई, तो जीवन कैसे चलेगा ? धर्म सभी को आशावादी बनाता है। गरीबों-पीड़ितों को यही संदेश देता है कि 'घबराने की कोई आवश्यकता नहीं क्योंकि जीवन आशादायक है और ऐसा ही आगे भी रहेगा।' यही कारण है कि गरीब या पीड़ित व्यक्ति धर्म को अपने से चिपकाकर रखता है।

जब यूरोप में ईसाईयत का प्रचार हुआ, उस समय रोम के आसपास सभी देशों की दशा बहुत खराब थी। लोगों को पेट भर खाना भी नहीं मिलता था। उस समय पेट भरने के लिए गरीब लोगों को खिचड़ी बांटी जाती थी। उस समय इन लोगों में ईसाई मत का प्रचार हुआ। दुखी और पीड़ित लोग इस धर्म के अनुयायी बने। यूरोपिय विद्वान मिस्टर गिबन ने एक बार कहा था कि ईसाई धर्म भिखारियों का धर्म है जो यूरोप का धर्म बन गया है। इसका जवाब देने के लिए मि. गिबन आज जीवित नहीं हैं। अगर वे जीवित होते तो शायद अपनी बात का जवाब वे खुद ही पा लेते।

कुछ लोग यह अवश्य कहेंगे कि यह बौद्ध धम्म भंगी-चमारों का धम्म

है। बामण लोग भगवान बुद्ध को भी "भो, गौतम !" कहकर पुकारते थे। बामण भगवान को इस प्रकार अपशब्द कहकर चिढ़ाया करते थे। लेकिन आप यह जानते हैं कि विदेशों में राम, कृष्ण और शंकर की मूर्तियों को खरीदने के लिए रखा जाय तो कोई नहीं खरीदेगा। अगर बुद्ध की मूर्ति रखी जाए तो एक भी मूर्ति नहीं बचेगी। भारत में जो होना था, वह बहुत कुछ होता रहा। कुछ बाहर भी देखो। बाहर अगर किसी का नाम प्रसिद्ध है, तो केवल भगवान बुद्ध का। फिर यह धर्म बगैर फैले कैसे रहेगा ?

हम अपने मार्ग से जरूर जाएंगे। वे अपनी राह से जाएं। हमें नया रास्ता मिल गया है। यह आशा का प्रतीक है। अभ्युदय और उत्कर्ष का महान मार्ग है। यह मार्ग नया नहीं है। इसे हम कहीं से लाए नहीं हैं। यह श्रेष्ठ मार्ग यहीं का है। यह भारतीय है। इस देश में 2000 वर्ष पूर्व भी बौद्ध धम्म था। इसका हमें दुख है कि हमने इस धम्म को पहले ही क्यों नहीं अपनाया ? भगवान बुद्ध के धम्म के सार तत्त्व अजर अमर हैं। फिर भी बुद्ध ने अपने सिद्धांतों के अपरिवर्तनीय होने का दावा नहीं किया। इस धम्म में समयानुसार बदलने की शक्ति है। इतनी उदारता किसी अन्य धर्म में नहीं है।

बौद्ध धम्म का पतन

इस देश से बौद्ध धम्म के नाश का मुख्य कारण इस देश पर मुसलमानों का अमानुषीय आक्रमण था। इस आक्रमण में हजारों मूर्तियां तोड़ी गई। भिक्खु मारे गए। इन आक्रमणों से घबरा कर बौद्ध भिक्खु दूसरे देशों में भाग गए। कोई तिब्वत गया। कुछ चीन चले गए। कोई कहीं गया और कोई कहीं। इसका परिणाम यह हुआ कि यहां पर भिक्खुओं का अभाव हो गया। उत्तर पश्चिम प्रांत में एक ग्रीक राजा था। उसका नाम था मिलिंद (मिनांडर)। उसे धर्म चर्चा में बहुत रुचि थी। उसने हिंदू धर्म शास्त्रों के पंडितों के साथ कई बार वाद-विवाद करके उन्हें हरा दिया था और कईयों को निरुत्तर कर दिया था। एक दिन उसने चाहा कि बौद्ध धम्म के विद्वानों के साथ भी वाद-विवाद करूं। इसलिए उसने अपने सेवकों को आदेश दिया कि जब कभी उनके राज्य में कोई बौद्ध धम्म का पंडित (विद्वान) नज़र आए, तो उसे उनके

पास लाया जाए। तब स्थानीय बौद्ध मतावलंबियों ने महापंडित और धम्म-धुरंधर भिक्खु नागसेन जी से प्रार्थना की कि वे राजा के पास जाकर वाद-विवाद में बौद्ध धम्म का मंडन करें। भिक्खु नागसेन बहुत बड़े विद्वान थे। नागसेन और मिलिंद के बीच जो पारस्परिक वाद-विवाद हुआ, उस सबको पुस्तकाकार (मिलिंद प्रश्न) में छापा गया है। मिलिंद ने एक प्रश्न किया कि धर्म की ग्लानि क्यों होती है ? नागसेन ने इसका उत्तर देते हुए इसके तीन कारण बताए। पहला यह कि सच्चा धर्म ही सदा बना रहता है। जिस धर्म के मूल में गंभीरता नहीं होती, वह धर्म केवल तात्कालिक धर्म होता है और समय वीतने पर ऐसा धर्म टिका नहीं रहता। दूसरा कारण यह होता है कि जब धर्म प्रचार करने वाले विद्वान ही नहीं रहते, तब धर्म की ग्लानि यानी हानि होती है। ज्ञानी लोगों को धर्म ज्ञान की चर्चा करनी चाहिए। विरोधियों के वाद-विवाद का खंडन करने के लिए धर्म के प्रचारक न हों, तो भी धर्म की हानि होती है। तीसरा कारण यह है कि धर्म और धर्म के तत्त्व विद्वानों के लिए होते हैं। साधारण लोगों के लिए मंदिर या विहार होते हैं, जहां पर जाकर जनता अपनी श्रेष्ठ विभूतियों की पूजा करती है।

आप लोगों को इस महान बौद्ध धम्म को स्वीकार करते हुए इन बातों का ध्यान रखना चाहिए। ऐसा कभी नहीं समझना चाहिए कि बौद्ध धम्म के तत्व केवल कुछ समय के लिए हैं। आज 2500 वर्षों के बाद भी बुद्ध के तत्त्वों को सारा संसार मानता है। अकेले अमेरिका में बुद्ध धर्म के अनुयायियों की 2000 संस्थाएं हैं। इंग्लैंड में तीन लाख रुपये खर्च करके बौद्ध विहार बनाया गया है। जर्मनी में तीन चार हजार बौद्ध संस्थाएं हैं। बुद्ध तत्त्व अजर अमर हैं। फिर भी बुद्ध ने अपने दर्शन के महान होने का दावा कमी नहीं किया और न उन्होंने कभी यह कहा कि उनका धर्म ईश्वरीय है। भगवान ने तो यही कहा था कि मेरे पिता और मेरी माता दोनों सामान्य मनुष्यों की भांति हैं। जिन्हें वह धर्म अच्छा लगे, वे इसे अपनाएं। क्योंकि इतनी उदारता की बातें किसी दूसरे धर्म में नहीं मिलेंगी।

दूसरे धर्मों और बौद्ध धम्म में महान अंतर है। बौद्ध धम्म की महान बातें आपको दूसरे धर्मों में नहीं मिलेंगी, क्योंकि दूसरे धर्म मनुष्य और ईश्वर

के गहरे संबंध को बताते हैं। दूसरे धर्म कहते हैं कि ईश्वर ने संसार को रचा है। उसी ने ही आकाश, वायु, इंद्र, सूरज और सब कुछ पैदा किये हैं। ईश्वर ने सब कुछ हमारे लिए कर दिया है। कुछ शेष नहीं रखा है। इसलिए हम ईश्वर की उपासना और भजन ही करते रहें। ईसाई धर्म के अनुसार मरने के बाद एक निर्णय का दिन (Day of Judgement) होगा। उसी के निर्णय अनुसार सब कुछ निर्धारित होगा।

ईश्वर और आत्मा के लिए बौद्ध धम्म में कोई स्थान नहीं है। भगवान बुद्ध ने कहा है कि संसार में सब जगह दुख है। नब्बे प्रतिशत लोग दुखी हैं, पीड़ित हैं। दुख से पीड़ित गरीब लोगों का उद्धार करना ही बौद्ध धम्म का मुख्य ध्येय है। कार्ल मार्क्स ने भगवान बुद्ध से ज्यादा कुछ नहीं कहा है। भगवान बुद्ध ने जो कुछ कहा है वह सब सरल और सीधा मार्ग है।

भाइयो और बहनो ! जो कुछ मुझे कहना था, वह सव कुछ मैंने कह दिया। बुद्ध धम्म सबसे अच्छा धम्म है। उसमें कोई दोप नहीं है। हिंदू धर्म में कुछ ऐसे तत्त्व हैं, जिनसे किसी को उत्साह नहीं मिल सकता। इसने हज़ारों वर्षों से आज तक हमारे समाज में किसी का भी विद्वान नहीं बनने दिया। आप लोगों के सामने मुझे अपने बचपन की बातें बताते हुए किसी प्रकार की झिझक नहीं होती है। मेरे स्कूल में एक अबामण (मराठा) औरत थी। वह स्वयं अनपढ़ थी परंतु मुझे कभी छूती न थी। मेरी मां मुझको कहती थी कि मैं बड़े लोगों को मामा कहकर पुकारूं। पोस्टमैन को मैं 'मामा' कहकर पुकारा करता था। स्कूल में एक दिन मुझे प्यास लगी। इसके लिए मैंने अपने मास्टर से कहा, मास्टर ने चपरासी को बुलाकर कहा कि इसे नल पर जाकर पानी पिला लाओ। चपरासी ने नल खोला तो मैंने पानी पिया। अगर कभी चपरासी न हुआ तो कई-कई दिन पानी पीने को नहीं मिलता था। प्यासा ही घर आता था और घर पर ही प्यास को बुझाता था। जब मैं पढ़ कर वापस आया, तब मुझे डिस्ट्रिक्ट जज बनने के लिए कहा गया। लेकिन इस रस्सी (फंदे) को मैंने अपने गले में नहीं बंधवाया क्योंकि मेरे नौकर हो जाने पर मेरे लोगों की सेवा कौन करेगा? इसी विचार को ध्यान में रखकर मैं नौकरी के चक्कर में नहीं पड़ा।

व्यक्तिगत रूप से इस देश की किसी भी 'रूढ़ि' या बात का विरोध करना मेरे लिए कठिन नहीं है। आप लोगों के सिर पर वैश्यों, क्षत्रियों और ब्राह्मणों ने पहाड़ खड़ा किया हुआ है। उसको किस प्रकार उलटा जाए या तोड़ा जाए, यह एक बहुत ही महत्वपूर्ण सवाल है। इसलिए मैं चाहता हूं कि इस धम्म का पूर्ण ज्ञान कराऊं। यह मेरा कर्त्तव्य भी है। इस कार्य के लिए मैं पुस्तकें लिखकर और आप लोगों की शंकाएं दूर करके पूर्ण ज्ञान प्राप्त कराऊंगा। आज मुझ पर विश्वास रख कर चलिए।

अपना और संसार का भी उद्धार करो !

आप पर अब काफी जिम्मेदारी आ पड़ी है। यंह बड़ी भारी चीज है। आप लोगों को ऐसे काम करने चाहिएं, जिससे सभी आपका आदर करें। आप इस धम्म को ऐसा न समझें कि आपने गले में मिट्टी का घड़ा बांध लिया है। बौद्ध धम्म की दृष्टि से भारत की भूमि अब सुनसान जंगल की भांति है। इसलिए आपका परम कर्त्तव्य है कि आप इस पवित्र धम्म को उत्तम रीति से पालने की प्रतिज्ञा करें, अन्यथा इस धर्म-परिवर्तन की निंदा होगी। आज आप सभी प्रतिज्ञा करें कि आप सभी बौद्ध न केवल अपना, बल्कि अपने साथ अपने देश का और इसके साथ सारे संसार का उद्धार करेंगे। संसार का उद्धार बौद्ध धम्म से ही होगा। संसार में जब तक न्याय को स्थान नहीं मिलेगा, तब तक शांति स्थापित नहीं हो सकतीं।

आमदनी का बीसवां भाग दीजिए

यह नया काम बहुत सर्वाधिक जिम्मेदारी का है। इसे पूरा करने के लिए आपने दृढ़ संकल्प किया है। हमारे नौजवानों को बहुत कुछ करना है। इस बात को पूर्ण-रूप से आपको ध्यान में रखना चाहिए। आप लोग केवल पेट के ही पुजारी न बनें। आप कम से कम अपनी आमदनी का बीसवां भाग इस पवित्र धम्म प्रचार के लिए दान देने का निर्णय करें। मुझे आप सबको अपने साथ ले जाना है। तथागत ने पहले-पहल कुछ ही लोगों को दीक्षा दी और उसी समय उनको आदेश दिया कि वे इस पवित्र धम्म का प्रचार करें। उसके बाद यश नामक एक विद्वान और 60 व्यक्तियों ने बौद्ध

धम्म की दीक्षा ली। यश भी अमीर घराने के थे। इनसे भगवान ने कहा कि यह धम्म "बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय लोकानुकंपाय आदि कल्याणं, मज्झ कल्याणं, परियवसान कल्याणं अर्थात बहुत जनों के हित के लिए है, बहुत जनों के सुख के लिए है और सब लोगों पर अनुकंपा करने के लिए है। यह आदि, मध्य और अंत में कल्याणकारक है।" भगवान ने परिस्थिति के अनुसार अपने धम्म प्रचार के ढंग को अपनाया था। अब हमें भी अपने समयानुसार इस धम्म के प्रचार का ढंग अपनाना होगा। इस देश में बौद्ध भिक्खु पर्याप्त नहीं हैं। इसलिए आप में से हर एक को इस धम्म की दीक्षा स्वयं लेनी होगी। इस बात की मैं पूर्ण घोषणा करता हूं कि हर बौद्ध धम्मानुयायी प्रत्येक व्यक्ति को दूसरों को भी त्रिशरण, पंचशील एवं 22 प्रतिज्ञाओं सहित बौद्ध धम्म में दीक्षित करने का पूर्ण अधिकार है।

भवतु सब्बमंगलं।
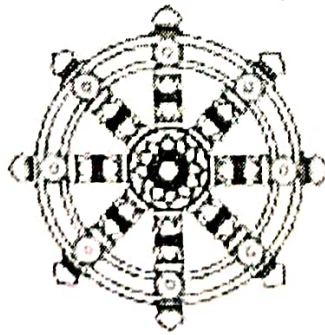
सम्यक प्रकाशन द्वारा प्रकाशित आंबेडकरी वाङ्मय

ISBN : 978-81-941154-4-1
₹ 25

सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली
Web : www.samyakprakashan.in